रामचरित्मानस

बालकाण्ड

***** रति को वरदान**

***** देवताओं का शिवजी से ब्याह के लिए प्रार्थना करना, सप्तर्षियों का पार्वती के पास जाना**

***** शिवजी की विचित्र बारात और विवाह की तैयारी**

रति को वरदान

दोहा :

*** अब तें रति तव नाथ कर होइहि नामु अनंगु। बिनु बपु ब्यापिहि सबहि पुनि सुनु निज मिलन प्रसंगु॥87॥

भावार्थ:

हे रति! अब से तेरे स्वामी का नाम अनंग होगा। वह बिना ही शरीर के सबको व्यापेगा। अब तू अपने पति से मिलने की बात सुन॥87॥

चौपाई :

*** जब जदुबंस कृष्न अवतारा। होइहि हरन महा महिभारा॥ कृष्न तनय होइहि पति तोरा। बचनु अन्यथा होइ न मोरा॥1॥

भावार्थ:

जब पृथ्वी के बड़े भारी भार को उतारने के लिए यदुवंश में श्री कृष्ण का अवतार होगा, तब तेरा पति उनके पुत्र (प्रद्युम्न) के रूप में उत्पन्न होगा। मेरा यह वचन अन्यथा नहीं होगा॥1॥

*** रति गवनी सुनि संकर बानी। कथा अपर अब कहउँ बखानी॥ देवन्ह समाचार सब पाए। ब्रह्मादिक बैकुंठ सिधाए॥2॥

भावार्थ:

शिवजी के वचन सुनकर रति चली गई। अब दूसरी कथा बखानकर (विस्तार से) कहता हूँ। ब्रह्मादि देवताओं ने ये सब समाचार सुने तो वे वैकुण्ठ को चले॥2॥

*** सब सुर बिष्नु बिरंचि समेता। गए जहाँ सिव कृपानिकेता॥ पृथक-पृथक तिन्ह कीन्हि प्रसंसा। भए प्रसन्न चंद्र अवतंसा॥3॥

भावार्थ:

फिर वहाँ से विष्णु और ब्रह्मा सहित सब देवता वहाँ गए, जहाँ कृपा के धाम शिवजी थे। उन सबने शिवजी की अलग-अलग स्तुति की, तब शशिभूषण शिवजी प्रसन्न हो गए॥3॥

*** बोले कृपासिंधु बृषकेतू। कहहु अमर आए केहि हेतू॥ कह बिधि तुम्ह प्रभु अंतरजामी। तदपि भगति बस बिनवउँ स्वामी॥4॥

भावार्थ:

कृपा के समुद्र शिवजी बोले- हे देवताओं! कहिए, आप किसलिए आए हैं? ब्रह्माजी ने कहा- हे प्रभो! आप अन्तर्यामी हैं, तथापि हे स्वामी! भक्तिवश मैं आपसे विनती करता हूँ॥4॥

देवताओं का शिवजी से ब्याह के लिए प्रार्थना करना, सप्तर्षियों का पार्वती के पास जाना

दोहा :

***सकल सुरन्ह के हृदयँ अस संकर परम उछाहु। निज नयनन्हि देखा चहहिं नाथ तुम्हार बिबाहु॥88॥

भावार्थ:

हे शंकर! सब देवताओं के मन में ऐसा परम उत्साह है कि हे नाथ! वे अपनी आँखों से आपका विवाह देखना चाहते हैं॥88॥

चौपाई :

*** यह उत्सव देखिअ भरि लोचन। सोइ कछु करहु मदन मद मोचन॥ कामु जारि रति कहुँ बरु दीन्हा। कृपासिन्धु यह अति भल कीन्हा॥1॥

भावार्थ:

हे कामदेव के मद को चूर करने वाले! आप ऐसा कुछ कीजिए, जिससे सब लोग इस उत्सव को नेत्र भरकर देखें। हे कृपा के सागर! कामदेव को भस्म करके आपने रति को जो वरदान दिया, सो बहुत ही अच्छा किया॥1॥

*** सासति करि पुनि करहिं पसाऊ। नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ॥ पारबतीं तपु कीन्ह अपारा। करहु तासु अब अंगीकारा॥2॥

भावार्थ:

हे नाथ! श्रेष्ठ स्वामियों का यह सहज स्वभाव ही है कि वे पहले दण्ड देकर फिर कृपा किया करते हैं। पार्वती ने अपार तप किया है, अब उन्हें अंगीकार कीजिए॥2॥

*** सुनि बिधि बिनय समुझि प्रभु बानी। ऐसेइ होउ कहा सुखु मानी॥ तब देवन्ह दुंदुभीं बजाईं। बरषि सुमन जय जय सुर साईं॥3॥

भावार्थ:

ब्रह्माजी की प्रार्थना सुनकर और प्रभु श्री रामचन्द्रजी के वचनों को याद करके शिवजी ने प्रसन्नतापूर्वक कहा- 'ऐसा ही हो।' तब देवताओं ने नगाड़े बजाए और फूलों की वर्षा करके 'जय हो! देवताओं के स्वामी जय हो' ऐसा कहने लगे॥3॥

*** अवसरु जानि सप्तरिषि आए। तुरतहिं बिधि गिरिभवन पठाए॥ प्रथम गए जहँ रहीं भवानी। बोले मधुर बचन छल सानी॥4॥

भावार्थ:

उचित अवसर जानकर सप्तर्षि आए और ब्रह्माजी ने तुरंत ही उन्हें हिमाचल के घर भेज दिया। वे पहले वहाँ गए जहाँ पार्वतीजी थीं और उनसे छल से भरे मीठे (विनोदयुक्त, आनंद पहुँचाने वाले) वचन बोले-॥4॥

दोहा :

*** कहा हमार न सुनेहु तब नारद कें उपदेस॥ अब भा झूठ तुम्हार पन जारेउ कामु महेस॥89॥

भावार्थ:

नारदजी के उपदेश से तुमने उस समय हमारी बात नहीं सुनी। अब तो तुम्हारा प्रण झूठा हो गया, क्योंकि महादेवजी ने काम को ही भस्म कर डाला॥89॥

मासपारायण, तीसरा विश्राम

चौपाई :

*** सुनि बोलीं मुसुकाइ भवानी। उचित कहेहु मुनिबर बिग्यानी॥ तुम्हरें जान कामु अब जारा। अब लगि संभु रहे सबिकारा॥1॥

भावार्थ:

यह सुनकर पार्वतीजी मुस्कुराकर बोलीं- हे विज्ञानी मुनिवरों! आपने उचित ही कहा। आपकी समझ में शिवजी ने कामदेव को अब जलाया है, अब तक तो वे विकारयुक्त (कामी) ही रहे!॥1॥

*** हमरें जान सदासिव जोगी। अज अनवद्य अकाम अभोगी॥ जौं मैं सिव सेये अस जानी। प्रीति समेत कर्म मन बानी॥2॥

भावार्थ:

किन्तु हमारी समझ से तो शिवजी सदा से ही योगी, अजन्मे, अनिन्द्य, कामरहित और भोगहीन हैं और यदि मैंने शिवजी को ऐसा समझकर ही मन, वचन और कर्म से प्रेम सहित उनकी सेवा की है॥2॥

*** तौ हमार पन सुनहु मुनीसा। करिहहिं सत्य कृपानिधि ईसा॥ तुम्ह जो कहा हर जारेउ मारा। सोइ अति बड़ अबिबेकु तुम्हारा॥3॥

भावार्थ:

तो हे मुनीश्वरो! सुनिए, वे कृपानिधान भगवान मेरी प्रतिज्ञा को सत्य करेंगे। आपने जो यह कहा कि शिवजी ने कामदेव को भस्म कर दिया, यही आपका बड़ा भारी अविवेक है॥3॥

*** तात अनल कर सहज सुभाऊ। हिम तेहि निकट जाइ नहिं काऊ॥ गएँ समीप सो अवसि नसाई। असि मन्मथ महेस की नाई॥4॥

भावार्थ:

हे तात! अग्नि का तो यह सहज स्वभाव ही है कि पाला उसके समीप कभी जा ही नहीं सकता और जाने पर वह अवश्य नष्ट हो जाएगा। महादेवजी और कामदेव के संबंध में भी यही न्याय (बात) समझना चाहिए॥4॥

दोहा :

*** हियँ हरषे मुनि बचन सुनि देखि प्रीति बिस्वास। चले भवानिहि नाइ सिर गए हिमाचल पास॥90॥

भावार्थ:

पार्वती के वचन सुनकर और उनका प्रेम तथा विश्वास देखकर मुनि हृदय में बड़े प्रसन्न हुए। वे भवानी को सिर नवाकर चल दिए और हिमाचल के पास पहुँचे॥90॥

चौपाई :

*** सबु प्रसंगु गिरिपतिहि सुनावा। मदन दहन सुनि अति दुखु पावा॥ बहुरि कहेउ रति कर बरदाना। सुनि हिमवंत बहुत सुखु माना॥1॥

भावार्थ:

उन्होंने पर्वतराज हिमाचल को सब हाल सुनाया। कामदेव का भस्म होना सुनकर हिमाचल बहुत दुःखी हुए। फिर मुनियों ने रति के वरदान की बात कही, उसे सुनकर हिमवान्‌ ने बहुत सुख माना॥1॥

*** हृदयँ बिचारि संभु प्रभुताई। सादर मुनिबर लिए बोलाई। सुदिनु सुनखतु सुघरी सोचाई। बेगि बेदबिधि लगन धराई॥2॥

भावार्थ:

शिवजी के प्रभाव को मन में विचार कर हिमाचल ने श्रेष्ठ मुनियों को आदरपूर्वक बुला लिया और उनसे शुभ दिन, शुभ नक्षत्र और शुभ घड़ी शोधवाकर वेद की विधि के अनुसार शीघ्र ही लग्न निश्चय कराकर लिखवा लिया॥2॥

*** पत्री सप्तरिषिन्ह सोइ दीन्ही। गहि पद बिनय हिमाचल कीन्ही॥ जाइ बिधिहि तिन्ह दीन्हि सो पाती। बाचत प्रीति न हृदयँ समाती॥3॥

भावार्थ:

फिर हिमाचल ने वह लग्नपत्रिका सप्तर्षियों को दे दी और चरण पकड़कर उनकी विनती की। उन्होंने जाकर वह लग्न पत्रिका ब्रह्माजी को दी। उसको पढ़ते समय उनके हृदय में प्रेम समाता न था॥3॥

*** लगन बाचि अज सबहि सुनाई। हरषे मुनि सब सुर समुदाई॥ सुमन बृष्टि नभ बाजन बाजे।

मंगल कलस दसहुँ दिसि साजे॥4॥

भावार्थ:

ब्रह्माजी ने लग्न पढ़कर सबको सुनाया, उसे सुनकर सब मुनि और देवताओं का सारा समाज हर्षित हो गया। आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी, बाजे बजने लगे और दसों दिशाओं में मंगल कलश सजा दिए गए॥4॥

शिवजी की विचित्र बारात और विवाह की तैयारी

दोहा :

*** लगे सँवारन सकल सुर बाहन बिबिध बिमान। होहिं सगुन मंगल सुभद करहिं अपछरा गान॥91॥

भावार्थ:

सब देवता अपने भाँति-भाँति के वाहन और विमान सजाने लगे, कल्याणप्रद मंगल शकुन होने लगे और अप्सराएँ गाने लगीं॥91॥

चौपाई :

*** सिवहि संभु गन करहिं सिंगारा। जटा मुकुट अहि मौरु सँवारा॥ कुंडल कंकन पहिरे ब्याला। तन बिभूति पट केहरि छाला॥1॥

भावार्थ:

शिवजी के गण शिवजी का श्रृंगार करने लगे। जटाओं का मुकुट बनाकर उस पर साँपों का मौर सजाया गया। शिवजी ने साँपों के ही कुंडल और कंकण पहने, शरीर पर विभूति रमायी और वस्त्र की जगह बाघम्बर लपेट लिया॥1॥

*** ससि ललाट सुंदर सिर गंगा। नयन तीनि उपबीत भुजंगा॥ गरल कंठ उर नर सिर माला। असिव बेष सिवधाम कृपाला॥2॥

भावार्थ:

शिवजी के सुंदर मस्तक पर चन्द्रमा, सिर पर गंगाजी, तीन नेत्र, साँपों का जनेऊ, गले में विष और छाती पर नरमुण्डों की माला थी। इस प्रकार उनका वेष अशुभ होने पर भी वे कल्याण के धाम और कृपालु हैं॥2॥

*** कर त्रिसूल अरु डमरु बिराजा। चले बसहँ चढ़ि बाजहिं बाजा॥ देखि सिवहि सुरत्रिय मुसुकाहीं। बर लायक दुलहिनि जग नाहीं॥3॥

भावार्थ:

एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में डमरू सुशोभित है। शिवजी बैल पर चढ़कर चले। बाजे बज रहे हैं। शिवजी को देखकर देवांगनाएँ मुस्कुरा रही हैं (और कहती हैं कि) इस वर के योग्य दुलहिन संसार में नहीं मिलेगी॥3॥

*** बिष्नु बिरंचि आदि सुरब्राता। चढ़ि चढ़ि बाहन चले बराता॥ सुर समाज सब भाँति अनूपा।

नहिं बरात दूलह अनुरूपा॥4॥

भावार्थ:

विष्णु और ब्रह्मा आदि देवताओं के समूह अपने-अपने वाहनों (सवारियों) पर चढ़कर बारात में चले। देवताओं का समाज सब प्रकार से अनुपम (परम सुंदर) था, पर दूल्हे के योग्य बारात न थी॥4॥

दोहा :

*** बिष्नु कहा अस बिहसि तब बोलि सकल दिसिराज। बिलग बिलग होइ चलहु सब निज निज सहित समाज॥92॥

भावार्थ:

तब विष्णु भगवान ने सब दिक्पालों को बुलाकर हँसकर ऐसा कहा- सब लोग अपने-अपने दल समेत अलग-अलग होकर चलो॥92॥

चौपाई :

*** बर अनुहारि बरात न भाई। हँसी करैहहु पर पुर जाई॥ बिष्नु बचन सुनि सुर मुसुकाने। निज निज सेन सहित बिलगाने॥1॥

भावार्थ:

हे भाई! हम लोगों की यह बारात वर के योग्य नहीं है। क्या पराए नगर में जाकर हँसी कराओगे? विष्णु भगवान की बात सुनकर देवता मुस्कुराए और वे अपनी-अपनी सेना सहित अलग हो गए॥1॥

*** मनहीं मन महेसु मुसुकाहीं। हरि के बिंग्य बचन नहिं जाहीं॥ अति प्रिय बचन सुनत प्रिय केरे। भृंगिहि प्रेरि सकल गन टेरे॥2॥

भावार्थ:

महादेवजी (यह देखकर) मन-ही-मन मुस्कुराते हैं कि विष्णु भगवान के व्यंग्य-वचन (दिल्लगी) नहीं छूटते! अपने प्यारे (विष्णु भगवान) के इन अति प्रिय वचनों को सुनकर शिवजी ने भी भृंगी को भेजकर अपने सब गणों को बुलवा लिया॥2॥

*** सिव अनुसासन सुनि सब आए। प्रभु पद जलज सीस तिन्ह नाए॥ नाना बाहन नाना बेषा। बिहसे सिव समाज निज देखा॥3॥

भावार्थ:

शिवजी की आज्ञा सुनते ही सब चले आए और उन्होंने स्वामी के चरण कमलों में सिर नवाया। तरह-तरह की सवारियों और तरह-तरह के वेष वाले अपने समाज को देखकर शिवजी हँसे॥3॥

*** कोउ मुख हीन बिपुल मुख काहू। बिनु पद कर कोउ बहु पद बाहू॥ बिपुल नयन कोउ नयन बिहीना। रिष्टपुष्ट कोउ अति तनखीना॥4॥

भावार्थ:

कोई बिना मुख का है, किसी के बहुत से मुख हैं कोई बिना हाथ-पैर का है तो किसी के कई हाथ-पैर हैं। किसी के बहुत आँखें हैं तो किसी के एक भी आँख नहीं है।कोई बहुत मोटा-ताजा है, तो कोई बहुत ही दुबला-पतला है॥4॥

छंद :

*** तन कीन कोउ अति पीन पावन कोउ अपावन गति धरें। भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरें॥ खर स्वान सुअर सृकाल मुख गन बेष अगनित को गनै। बहु जिनस प्रेत पिसाच जोगि जमात बरनत नहिं बनै॥

भावार्थ:

कोई बहुत दुबला, कोई बहुत मोटा, कोई पवित्र और कोई अपवित्र वेष धारण किए हुए है।भयंकर गहने पहने हाथ में कपाल लिए हैं और सब के सब शरीर में ताजा खून लपेटे हुए हैं। गधे, कुत्ते, सूअर और सियार के से उनके मुख हैं। गणों के अनगिनत वेषों को कौन गिने? बहुत प्रकार के प्रेत, पिशाच और योगिनियों की जमाते हैं। उनका वर्णन करते नहीं बनता।

सोरठा :

*** नाचहिं गावहिं गीत परम तरंगी भूत सब। देखत अति बिपरीत बोलहिं बचन बिचित्र बिधि॥93॥

भावार्थ:

भूत-प्रेत नाचते और गाते हैं, वे सब बड़े मौजी हैं। देखने में बहुत ही बेढंगे जानपड़ते हैं और बड़े ही विचित्र ढंग से बोलते हैं॥93॥

चौपाई :

*** जस दूलहु तसि बनी बराता। कौतुक बिबिध होहिं मग जाता॥ इहाँ हिमाचल रचेउ बिताना। अति बिचित्र नहिं जाइ बखाना॥1॥

भावार्थ:

जैसा दूल्हा है, अब वैसी ही बारात बन गई है। मार्ग में चलते हुए भाँति-भाँति के कौतुक (तमाशे) होते जाते हैं। इधर हिमाचल ने ऐसा विचित्र मण्डप बनाया कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता॥1॥

*** सैल सकल जहँ लगि जग माहीं। लघु बिसाल नहिं बरनि सिराहीं॥ बन सागर सब नदी तलावा। हिमगिरि सब कहुँ नेवत पठावा॥2॥

भावार्थ:

जगत में जितने छोटे-बड़े पर्वत थे, जिनका वर्णन करके पार नहीं मिलता तथा जितने वन, समुद्र, नदियाँ और तालाब थे, हिमाचल ने सबको नेवता भेजा॥2॥

*** कामरूप सुंदर तन धारी। सहित समाज सहित बर नारी॥ गए सकल तुहिमाचल गेहा। गावहिं मंगल सहित सनेहा॥3॥

भावार्थ:

वे सब अपनी इच्छानुसार रूप धारण करने वाले सुंदर शरीर धारण कर सुंदरीस्त्रियों और समाजों के साथ हिमाचल के घर गए। सभी स्नेह सहित मंगल गीत गाते हैं॥3॥

*** प्रथमहिं गिरि बहु गृह सँवराए। जथाजोगु तहँ तहँ सब छाए॥ पुर सोभा अवलोकि सुहाई। लागइ लघु बिरंचि निपुनाई॥4॥

भावार्थ:

हिमाचल ने पहले ही से बहुत से घर सजवा रखे थे। यथायोग्य उन-उन स्थानों में सब लोग उतर गए। नगर की सुंदर शोभा देखकर ब्रह्मा की रचना चातुरी भी तुच्छ लगतीथी॥4॥ छन्द :

*** लघु लाग बिधि की निपुनता अवलोकि पुर सोभा सही। बन बाग कूपतड़ाग सरिता सुभग सब सक को कही॥ मंगल बिपुल तोरन पताका केतु गृह गृह सोहहीं। बनिता पुरुष सुंदर चतुर छबि देखि मुनि मन मोहहीं॥

भावार्थ:

नगर की शोभा देखकर ब्रह्मा की निपुणता सचमुच तुच्छ लगती है। वन, बाग, कुएँ, तालाब, नदियाँ सभी सुंदर हैं, उनका वर्णन कौन कर सकता है? घर-घर बहुत सेमंगल सूचक तोरण और ध्वजा-पताकाएँ सुशोभित हो रही हैं। वहाँ के सुंदर औरचतुर स्त्री-पुरुषों की छबि देखकर मुनियों के भी मन मोहित हो जाते हैं॥

दोहा :

*** जगदंबा जहँ अवतरी सो पुरु बरनि कि जाइ। रिद्धि सिद्धि संपत्ति सुख नित नूतन अधिकाइ॥94॥

भावार्थ:

जिस नगर में स्वयं जगदम्बा ने अवतार लिया, क्या उसका वर्णन हो सकता है? वहाँ ऋद्धि, सिद्धि, सम्पत्ति और सुख नित-नए बढ़ते जाते हैं॥94॥

चौपाई :

*** नगर निकट बरात सुनि आई। पुर खरभरु सोभा अधिकाई॥ करि बनाव सजि बाहन नाना। चले लेन सादर अगवाना॥1॥

भावार्थ:

बारात को नगर के निकट आई सुनकर नगर में चहल-पहल मच गई, जिससे उसकी शोभा बढ़ गई। अगवानी करने वाले लोग बनाव-श्रृंगार करके तथा नाना प्रकार की सवारियों को सजाकर आदर सहित बारात को लेने चले॥1॥

*** हियँ हरषे सुर सेन निहारी। हरिहि देखि अति भए सुखारी॥ सिव समाज जब देखन लागे। बिडरि चले बाहन सब भागे॥2॥

भावार्थ:

देवताओं के समाज को देखकर सब मन में प्रसन्न हुए और विष्णु भगवान को देखकर तो बहुत

ही सुखी हुए किन्तु जब शिवजी के दल को देखने लगे तब तो उनके सब वाहन (सवारियों के हाथी, घोड़े, रथ के बैल आदि) डरकर भाग चले॥2॥

*** धरि धीरजु तहँ रहे सयाने। बालक सब लै जीव पराने॥ गएँ भवन पूछहिं पितु माता। कहहिं बचन भय कंपित गाता॥3॥

भावार्थ:

कुछ बड़ी उम्र के समझदार लोग धीरज धरकर वहाँ डटे रहे। लड़के तो सब अपने प्राण लेकर भागे। घर पहुँचने पर जब माता-पिता पूछते हैं, तब वे भय से काँपते हुए शरीर से ऐसा वचन कहते हैं॥3॥

*** कहिअ काह कहि जाइ न बाता। जम कर धार किधौं बरिआता॥ बरु बौराह बसहँ असवारा। ब्याल कपाल बिभूषन छारा॥4॥

भावार्थ:

क्या कहें, कोई बात कही नहीं जाती। यह बारात है या यमराज की सेना? दूल्हा पागल है और बैल पर सवार है। साँप, कपाल और राख ही उसके गहने हैं॥4॥

छन्द :

*** तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा। सँग भूत प्रेत पिसाच जोगिनि बिकट मुख रजनीचरा॥ जो जिअत रहिहि बरात देखत पुन्य बड़ तेहि कर सही। देखिहि सो उमा बिबाहु घर घर बात असि लरिकन्ह कही॥

भावार्थ:

दूल्हे के शरीर पर राख लगी है, साँप और कपाल के गहने हैं, वह नंगा, जटाधारी और भयंकर है। उसके साथ भयानक मुखवाले भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनियाँ और राक्षस हैं, जो बारात को देखकर जीता बचेगा, सचमुच उसके बड़े ही पुण्य हैं और वही पार्वती का विवाह देखेगा। लड़कों ने घर-घर यही बात कही।

दोहा :

*** समुझि महेस समाज सब जननि जनक मुसुकाहिं। बाल बुझाए बिबिध बिधि निडर होहु डरु नाहिं॥95॥

भावार्थ:

महेश्वर (शिवजी) का समाज समझकर सब लड़कों के माता-पिता मुस्कुराते हैं। उन्होंने बहुत तरह से लड़कों को समझाया कि निडर हो जाओ, डर की कोई बात नहीं है॥95॥

चौपाई :

*** लै अगवान बरातहि आए। दिए सबहि जनवास सुहाए॥ मैनाँ सुभ आरती सँवारी। संग सुमंगल गावहिं नारी॥1॥

भावार्थ:

अगवान लोग बारात को लिवा लाए, उन्होंने सबको सुंदर जनवासे ठहरने को दिए। मैना (पार्वतीजी की माता) ने शुभ आरती सजाई और उनके साथ की स्त्रियाँ उत्तम मंगलगीत गाने लगीं॥1॥

*** कंचन थार सोह बर पानी। परिछन चली हरहि हरषानी॥ बिकट बेष रुद्रहि जब देखा। अबलन्ह उर भय भयउ बिसेषा॥2॥

भावार्थ:

सुंदर हाथों में सोने का थाल शोभित है, इस प्रकार मैना हर्ष के साथ शिवजी का परछन करने चलीं। जब महादेवजी को भयानक वेष में देखा तब तो स्त्रियों के मन में बड़ा भारी भय उत्पन्न हो गया॥2॥

*** भागि भवन पैठीं अति त्रासा। गए महेसु जहाँ जनवासा॥ मैना हृदयँ भयउ दुखु भारी। लीन्ही बोली गिरीसकुमारी॥3॥

भावार्थ:

बहुतही डर के मारे भागकर वे घर में घुस गईं और शिवजी जहाँ जनवासा था, वहाँ चले गए। मैना के हृदय में बड़ा दुःख हुआ, उन्होंने पार्वतीजी को अपने पास बुला लिया॥3॥

*** अधिक सनेहँ गोद बैठारी। स्याम सरोज नयन भरे बारी॥ जेहिं बिधि तुम्हहि रूपु अस दीन्हा। तेहिं जड़ बरु बाउर कस कीन्हा॥4॥

भावार्थ:

और अत्यन्त स्नेह से गोद में बैठाकर अपने नीलकमल के समान नेत्रों में आँसू भरकर कहा- जिस विधाता ने तुमको ऐसा सुंदर रूप दिया, उस मूर्ख ने तुम्हारे दूल्हे को बावला कैसे बनाया?॥4॥

छन्द :

*** कस कीन्ह बरु बौराह बिधि जेहिं तुम्हहि सुंदरता दई। जो फलु चहिअ सुरतरुहिं सो बरबस बबूरहिं लागई॥ तुम्ह सहित गिरि तें गिरौं पावक जरौं जलनिधि महुँ परौं। घरु जाउ अपजसु होउ जग जीवत बिबाहु न हौं करौं॥

भावार्थ:

जिस विधाता ने तुमको सुंदरता दी, उसने तुम्हारे लिए वर बावला कैसे बनाया? जो फल कल्पवृक्ष में लगना चाहिए, वह जबर्दस्ती बबूल में लग रहा है। मैं तुम्हें लेकर पहाड़ से गिर पड़ूँगी, आग में जल जाऊँगी या समुद्र में कूद पड़ूँगी। चाहे घर उजड़ जाए और संसार भर में अपकीर्ति फैल जाए, पर जीते जी मैं इस बावले वर से तुम्हारा विवाह न करूँगी।

दोहा :

*** भईं बिकल अबला सकल दुखित देखि गिरिनारि। करि बिलापु रोदति बदति सुता सनेहु सँभारि॥96॥।

भावार्थ:

हिमाचल की स्त्री (मैना) को दुःखी देखकर सारी स्त्रियाँ व्याकुल हो गईं। मैना अपनी कन्या के स्नेह को याद करके विलाप करती, रोती और कहती थीं-॥96॥

चौपाई :

*** नारद कर मैं काह बिगारा। भवनु मोर जिन्ह बसत उजारा॥ अस उपदेसु उमहि जिन्ह दीन्हा। बौरे बरहि लागि तपु कीन्हा॥1॥

भावार्थ:

मैंने नारद का क्या बिगाड़ा था, जिन्होंने मेरा बसता हुआ घर उजाड़ दिया और जिन्होंने पार्वती को ऐसा उपदेश दिया कि जिससे उसने बावले वर के लिए तप किया॥1॥

*** साचेहुँ उन्ह कें मोह न माया। उदासीन धनु धामु न जाया॥ पर घर घालक लाज न भीरा। बाँझ कि जान प्रसव कै पीरा॥2॥

भावार्थ:

सचमुच उनके न किसी का मोह है, न माया, न उनके धन है, न घर है और न स्त्री ही है, वे सबसे उदासीन हैं। इसी से वे दूसरे का घर उजाड़ने वाले हैं। उन्हें न किसी की लाज है, न डर है। भला, बाँझ स्त्री प्रसव की पीड़ा को क्या जाने॥2॥

*** जननिहि बिकल बिलोकि भवानी। बोली जुत बिबेक मृदु बानी॥ अस बिचारि सोचहि मति माता। सो न टरइ जो रचइ बिधाता॥3॥

भावार्थ:

माता को विकल देखकर पार्वतीजी विवेकयुक्त कोमल वाणी बोलीं- हे माता! जो विधाता रच देते हैं, वह टलता नहीं, ऐसा विचार कर तुम सोच मत करो!॥3॥

*** करम लिखा जौं बाउर नाहू। तौ कत दोसु लगाइअ काहू॥ तुम्ह सन मिटहिं कि बिधि के अंका। मातु ब्यर्थ जनि लेहु कलंका॥4॥

भावार्थ:

जो मेरे भाग्य में बावला ही पति लिखा है, तो किसी को क्यों दोष लगाया जाए? हे माता! क्या विधाता के अंक तुमसे मिट सकते हैं? वृथा कलंक का टीका मत लो॥4॥

छन्द :

*** जनि लेहु मातु कलंकु करुना परिहरहु अवसर नहीं। दुखु सुखु जो लिखा लिलार हमरें जाब जहँ पाउब तहीं॥ सुनि उमा बचन बिनीत कोमल सकल अबला सोचहीं। बहु भाँति बिधिहि लगाइ दूषन नयन बारि बिमोचहीं॥

भावार्थ:

हे माता! कलंक मत लो, रोना छोड़ो, यह अवसर विषाद करने का नहीं है। मेरे भाग्य में जो दुःख-सुख लिखा है, उसे मैं जहाँ जाऊँगी, वहीं पाऊँगी! पार्वतीजी के ऐसे विनय भरे कोमल वचन सुनकर सारी स्त्रियाँ सोच करने लगीं और भाँति-भाँति से विधाता को दोष देकर आँखों से आँसू बहाने

लगीं।

दोहा :

*** तेहि अवसर नारद सहित अरु रिषि सप्त समेत। समाचार सुनि तुहिनगिरि गवने तुरत निकेत॥97॥

भावार्थ:

इस समाचार को सुनते ही हिमाचल उसी समय नारदजी और सप्त ऋषियों को साथ लेकर अपने घर गए॥97॥

चौपाई :

*** तब नारद सबही समुझावा। पूरुब कथा प्रसंगु सुनावा॥ मयना सत्य सुनहु मम बानी। जगदंबा तव सुता भवानी॥1॥

भावार्थ:

तब नारदजी ने पूर्वजन्म की कथा सुनाकर सबको समझाया (और कहा) कि हे मैना! तुम मेरी सच्ची बात सुनो, तुम्हारी यह लड़की साक्षात जगज्जनी भवानी है॥1॥

*** अजा अनादि सक्ति अबिनासिनि। सदा संभु अरधंग निवासिनि॥ जग संभव पालन लय कारिनि। निज इच्छा लीला बपु धारिनि॥2॥

भावार्थ:

ये अजन्मा, अनादि और अविनाशिनी शक्ति हैं। सदा शिवजी के अर्द्धांग में रहती हैं। ये जगत की उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाली हैं और अपनी इच्छा से ही लीला शरीर धारण करती हैं॥2॥

*** जनमीं प्रथम दच्छ गृह जाई। नामु सती सुंदर तनु पाई॥ तहँहुँ सती संकरहि बिबाहीं। कथा प्रसिद्ध सकल जग माहीं॥3॥

भावार्थ:

पहले ये दक्ष के घर जाकर जन्मी थीं, तब इनका सती नाम था, बहुत सुंदर शरीर पायाथा। वहाँ भी सती शंकरजी से ही ब्याही गई थीं। यह कथा सारे जगत में प्रसिद्ध है॥3॥

*** एक बार आवत सिव संगा। देखेउ रघुकुल कमल पतंगा॥ भयउ मोहु सिव कहा न कीन्हा। भ्रम बस बेषु सीय कर लीन्हा॥4॥

भावार्थ:

एक बार इन्होंने शिवजी के साथ आते हुए (राह में) रघुकुल रूपी कमल के सूर्यश्री रामचन्द्रजी को देखा, तब इन्हें मोह हो गया और इन्होंने शिवजी का कहना न मानकर भ्रमवश सीताजी का वेष धारण कर लिया॥4॥ छन्द :

*** सिय बेषु सतीं जो कीन्ह तेहिं अपराध संकर परिहरीं। हर बिरहँ जाइ बहोरि पितु कें जग्य जोगानल जरीं॥ अब जनमि तुम्हरे भवन निज पति लागि दारुन तपु किया। अस जानि संसय

तजहु गिरिजा सर्बदा संकरप्रिया॥
भावार्थ:
सतीजी ने जो सीता का वेष धारण किया, उसी अपराध के कारण शंकरजी ने उनको त्याग दिया। फिर शिवजी के वियोग में ये अपने पिता के यज्ञ में जाकर वहीं योगाग्नि से भस्म हो गईं। अब इन्होंने तुम्हारे घर जन्म लेकर अपने पति के लिए कठिन तप किया है ऐसा जानकर संदेह छोड़ दो, पार्वतीजी तो सदा ही शिवजी की प्रिया (अर्द्धांगिनी) हैं।
दोहा :
*** सुनि नारद के बचन तब सब कर मिटा बिषाद। छन महुँ ब्यापेउ सकल पुर घर घर यह संबाद॥98॥
भावार्थ:
तब नारद के वचन सुनकर सबका विषाद मिट गया और क्षणभर में यह समाचार सारे नगर में घर-घर फैल गया॥98॥
चौपाई :
*** तब मयना हिमवंतु अनंदे। पुनि पुनि पारबती पद बंदे॥ नारि पुरुष सिसु जुबा सयाने। नगर लोग सब अति हरषाने॥1॥
भावार्थ:
तब मैना और हिमवान आनंद में मग्न हो गए और उन्होंने बार-बार पार्वती के चरणों की वंदना की। स्त्री, पुरुष, बालक, युवा और वृद्ध नगर के सभी लोग बहुत प्रसन्न हुए॥1॥
*** लगे होन पुर मंगल गाना। सजे सबहिं हाटक घट नाना॥ भाँति अनेक भई जेवनारा। सूपसास्त्र जस कछु ब्यवहारा॥2॥
भावार्थ:
नगर में मंगल गीत गाए जाने लगे और सबने भाँति-भाँति के सुवर्ण के कलश सजाए। पाक शास्त्र में जैसी रीति है, उसके अनुसार अनेक भाँति की ज्योनार हुई (रसोई बनी)॥2॥
***सो जेवनार कि जाइ बखानी। बसहिं भवन जेहिं मातु भवानी॥ सादर बोले सकल बराती। बिष्नु बिरंचि देव सब जाती॥3॥
भावार्थ:
जिस घर में स्वयं माता भवानी रहती हों, वहाँ की ज्योनार (भोजन सामग्री) का वर्णन कैसे किया जा सकता है? हिमाचल ने आदरपूर्वक सब बारातियों, विष्णु, ब्रह्मा और सब जाति के देवताओं को बुलवाया॥3॥
*** बिबिधि पाँति बैठी जेवनारा। लागे परुसन निपुन सुआरा॥ नारिबृंद सुर जेवँत जानी। लगीं देन गारीं मृदु बानी॥4॥
भावार्थ:

भोजन (करने वालों) की बहुत सी पंगतें बैठीं। चतुर रसोइए परोसने लगे। स्त्रियोंकी मंडलियाँ देवताओं को भोजन करते जानकर कोमल वाणी से गालियाँ देने लगीं॥4॥

छन्द :

*** गारीं मधुर स्वर देहिं सुंदरि बिंग्य बचन सुनावहीं। भोजनुकरहिं सुर अति बिलंबु बिनोदु सुनि सचु पावहीं॥ जेवँत जो बढ़्यो अनंदु सो मुख कोटिहूँ न परै कह्यो। अचवाँइ दीन्हें पान गवने बास जहँ जाको रह्यो॥

भावार्थ:

सब सुंदरी स्त्रियाँ मीठे स्वर में गालियाँ देने लगीं और व्यंग्य भरे वचन सुनाने लगीं। देवगण विनोद सुनकर बहुत सुख अनुभव करते हैं इसलिए भोजन करने में बड़ी देर लगा रहे हैं। भोजन के समय जो आनंद बढ़ा वह करोड़ों मुँह से भी नहीं कहा जा सकता। (भोजन कर चुकने पर) सबके हाथ-मुँह धुलवाकर पान दिए गए। फिर सब लोग, जो जहाँ ठहरे थे, वहाँ चले गए।

दोहा :

***बहुरि मुनिन्ह हिमवंत कहुँ लगन सुनाई आइ। समय बिलोकि बिबाह कर पठए देव बोलाइ॥99॥

भावार्थ:

फिर मुनियों ने लौटकर हिमवान् को लगन (लग्न पत्रिका) सुनाई और विवाह का समय देखकर देवताओं को बुला भेजा॥99॥

चौपाई :

*** बोलि सकल सुर सादर लीन्हे। सबहि जथोचित आसन दीन्हे॥ बेदी बेद बिधान सँवारी। सुभग सुमंगल गावहिं नारी॥1॥

भावार्थ:

सब देवताओं को आदर सहित बुलवा लिया और सबको यथायोग्य आसन दिए। वेद की रीति से वेदी सजाई गई और स्त्रियाँ सुंदर श्रेष्ठ मंगल गीत गाने लगीं॥1॥

*** सिंघासनु अति दिब्य सुहावा। जाइ न बरनि बिरंचि बनावा॥ बैठे सिव बिप्रन्ह सिरु नाई। हृदयँ सुमिरि निज प्रभु रघुराई॥2॥

भावार्थ:

वेदिका पर एक अत्यन्त सुंदर दिव्य सिंहासन था, जिस (की सुंदरता) का वर्णन नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह स्वयं ब्रह्माजी का बनाया हुआ था। ब्राह्मणों को सिर नवाकर और हृदय में अपने स्वामी श्री रघुनाथजी का स्मरण करके शिवजी उस सिंहासन पर बैठ गए॥2॥

*** बहुरि मुनीसन्ह उमा बोलाईं। करि सिंगारु सखीं लै आईं॥ देखत रूपु सकल सुर मोहे। बरनै छबि अस जग कबि को है॥3॥

भावार्थ:

फिर मुनीश्वरों ने पार्वतीजी को बुलाया। सखियाँ श्रृंगार करके उन्हें ले आईं। पार्वतीजी के रूप को देखते ही सब देवता मोहित हो गए। संसार में ऐसा कवि कौन है, जो उस सुंदरता का वर्णन कर सके?॥3॥

*** जगदंबिका जानि भव भामा। सुरन्ह मनहिं मन कीन्ह प्रनामा॥ सुंदरता मरजाद भवानी। जाइ न कोटिहुँ बदन बखानी॥4॥

भावार्थ:

पार्वतीजी को जगदम्बा और शिवजी की पत्नी समझकर देवताओं ने मन ही मन प्रणाम किया। भवानीजी सुंदरता की सीमा हैं। करोड़ों मुखों से भी उनकी शोभा नहीं कही जासकती॥4॥

छन्द :

*** कोटिहुँ बदन नहिं बनै बरनत जग जननि सोभा महा। सकुचहिं कहत श्रुति सेष सारद मंदमति तुलसीकहा॥ छबिखानि मातु भवानि गवनीं मध्य मंडप सिवजहाँ। अवलोकि सकहिं न सकुच पति पद कमल मनु मधुकरु तहाँ॥

भावार्थ:

जगज्जननी पार्वतीजी की महान शोभा का वर्णन करोड़ों मुखों से भी करते नहीं बनता। वेद, शेषजी और सरस्वतीजी तक उसे कहते हुए सकुचा जाते हैं तब मंदबुद्धि तुलसी किस गिनती में है? सुंदरता और शोभा की खान माता भवानी मंडप के बीच में, जहाँ शिवजी थे, वहाँ गईं। वे संकोच के मारे पति (शिवजी) के चरणकमलों को देख नहीं सकतीं, परन्तु उनका मन रूपी भौंरा तो वहीं (रसपान कर रहा) था। **अगला पेज...**

रामचरित्मानस

बालकाण्ड